# समाज और पत्रकारिता का रिश्ता क्या हो

यह अभी भी अनसुलझा प्रश्न है कि पत्रकारिता को इस या उस दल के लिए अपने पाठक या दर्शक तैयार करना चाहिये या फिर वह लोगों को राज्य की नीति और उसके कार्यों की विवेचना करते हुए उनकी समझ ऐसी बनाये जिससे वे अपनी साफ स्पष्ट समझ बना सकें और प्रलोभन या प्रचार में न आते हुए अपना मत बना सकें। कहने को तो कहा यही जायेगा कि उसे राज्य नीति समझाने के लिए ही काम करना ठीक होगा पर यदि हम उसकी ओर से दी जा रही सूचना ओर विचार सामग्री का तटस्थ विवेचन करें तो वह दलों की पक्षधरता की ओर ही झुकी दिखाई देती हैं। यह यहां तक है कि अमुक पत्रकार किस दल की तरफदारी करता है। प्रिंट माध्यम की सूचनायें और सूचना चैनलों की जानकारियां तथा बहसें इसी की साक्ष्य प्रस्तुत करती हुई दिखाई देती हैं। फिर सूचना देने का जो ढंग है वह इतना रस्मी और जटिल होता है कि पढ़े लिखे लोग भी उसका शब्दार्थ भले ही समझ लें पर उसका निहितार्थ, भावार्थ और समग्रार्थ नहीं समझ पाते हैं। ऐसे में उन अधिकांश 'सार्वभौम सत्ता' रखने वाले मताधिकारियों से क्या अपेक्षा करें जो संख्या में अधिक हैं पर कम पढ़े या अपढ़ हैं। अपनी इस तरह की प्रस्तुति के बारे में मीडिया ने कभी भी न तो समीक्षा की है और न ही अपने कथ्यका पुनर्पाठ किया है। सच तो यह भी है कि उसे भी संभवत: पूरी तरह से अपने कथ्य की व्याख्या करने और समझने में कठिनाई आती होगी। इसलिए भी कि उसकी अपनी भी शिक्षा या जानकारी इस मामले में कम ही होती है। वह तो ज्यादातर प्रचार समाचार की तरह विचार को प्रस्तुत करता रहा है। एक विषय तो ऐसा है जिसपर खुद मीडिया के लोग ही विभाजित हैं। मीडिया की आर्थिकी या व्यावसायिकता को लेकर जब भी विमर्श होता है तब मीडिया के ही  कुछ लोग उसकी व्यावसायिकता को इस अर्थ में वाजिब ठहराने लगते हैं कि उसका मुनाफा कमाना गैर वाजिब नहीं है। यानि उसे अन्य उद्योग या व्यवसाय की तरह, उनके व्यावसायिक मूल्यों और लक्ष्यों के आधार पर चलने में कोई बुराई नहीं हैं। इस तरह से वे असीमित मुनाफे के साथ खड़े हो जाते हैं।

यह सब बातें दो मीडिया विमर्श में ही उठीं और उन पर मत विभाजन तो हुआ पर कम, मतैक्य अधिक हुआ। विमर्श का आधार था-मीडिया के समक्ष मूल्यगत चुनौतियां। यह विमर्श इस अर्थ में महत्वपूर्ण रहा कि लोगों ने इस बहाने आत्म-प्रेक्षा की। अपने में झांकते हुए अपनी भूमिका को समझा और अपने समाज की जरूरतों को भी समझा। यह अभी अनुत्तरित है कि पत्रकार का विचार बेहतर समाज के निर्माण के लिए हो या इस मकसद के लिए वह बेहतर दल या बेहतर विचार के साथ अपने को जोड़कर पत्रकारिता करे। कथ्य की जटिलता पर बहुत विस्तार से श्री एन. के. सिंह ने बात की। उनके कहने का आशय था कि मीडिया में जो खबरें आती हैं। उनका निहितार्थ या समग्रार्थ लोग नहीं जान पाते हैं क्योंकि वे एक तरह से संक्षेप सूचना संक्षेप में ही होती

हैं और उन सूचनाओं के संदर्भ या व्याख्याएं न तो उनके साथ होती हैं और न ही की जाती हैं। चैनलों पर जो बहस इस बारे में आती हैं वे तो पक्षधरता का ही एक बेहतर और बेमिसाल उदाहरण होती हैं। इन बहसों में तो कई बार सूत्रधार ही नहीं समझ पाते कि वे लोगों या विशेषज्ञों से क्या जानना चाहते हैं। एक तरह से वे अपने एजेंडे की पुष्टि के लिए ही बात कर रहे होते हैं। यह भी कहा गया कि खुद पत्रकार भी इस सब के लिए अपने को तैयार नहीं कर पाता है क्योंकि उसकी अपनी पढ़ाई भी सीमित रही है। इस व्यवसाय में आने के बाद भी उसने अपने आपको अपडेट नहीं किया है। वह भी अपने को सूचनाओं की परिधि में ही घूमता हुआ पाता है। इस तरह से यह सब सूचना का व्यापार दलों के पक्ष या विपक्ष की ओर ही बना रहता है। इस सबसे जाने या अनजाने में, कह सकते हैं, जानते हुए भी खुद पत्रकार भी दलों या पक्ष की ही पैरवी कर रहा होता है। जाहिर है, ऐसे सूचना संवाद या बहस का परिणाम लोगों की समझ विकसित करने के बजाय लोगों को विभाजित करने में अधिक रहा हैं। इस बारे में कोई अध्ययन हुआ है या नहीं, इसकी जानकारी तो नहीं हैं, पर इतना तो कहा जा सकता है कि ऐसा अध्ययन हो तो निष्कर्ष संभवत: यही निकलेगा कि पत्रकारिता ने लोगों को दलों के इस या उस ओर खड़ा होने के लिए ही प्रेरित और पोषित किया है। उन्हें राज्य नीति या रणनीति को समझने की योग्यता के लिए तैयार नहीं किया है।

इंडियन ब्राडकास्ट एडीटर्स एसोसिएशन के सचिव अजीत अंजुम ने अपने जीवन के बहुत से अनुभवों को व्यक्त करते हुए कहा कि पत्रकार भी अपने दायित्व को पूरी तरह से नहीं निभा पा रहा है। उनका आशय था कि जिस वर्ग पर ऐसा सूचना-समाज बनाने का दायित्व जो अपने संविधान की मंशा को पूरा करने की तरफ ही विकसित हो, उसने यदि मूल्यहीन और साम्प्रदायिक विचारों के पोषण और पल्लवन में मदद की हो तो उसे क्या कहा जाएगा। उन्होंने अपनी बेबाक राय व्यक्त करते हुए कहा कि हमें एक समावेशी और मानवीय मूल्यों पर आधारित समाज के लिए अपनी राय और अपने कार्य को निर्भय होकर करने की जरूरत है। लोग इस राय से भी सहमत थे कि मूल्यों के विकास और निर्वहन के लिए किसी विशेष संहिता या नियमन की जरूरत नहीं है। यह तो स्वयं पर निर्भर करता है कि हम समाज के हित के लिए काम करते हैं या किसी निहित स्वार्थ की मदद कर रहे हैं।

पत्रकारिता ने अपने समय में बहुत से अच्छे काम किये हैं, इससे किसी को कोई असहमति नहीं है। यह भी सब जानते हैं कि बीते बरसों में पत्रकारिता ने अपने मूल्य छोड़ते हुए व्यावसायिक मूल्यों को वरीयता दी है और ऐसा करते हुए उसने मूल्यों से समझौता किया है। ऐसा कहते हुए लोग अपनी तरह से इसका विवेचन करते हैं। कोई इसे समाज के हर वर्ग में आई विकृति का परिणाम मानते हैं। वे मानते हैं कि पत्रकार भी तो उसी समाज से आता है जिसके मूल्यों में गिरावट हुई है। ऐसा कहते हुए वे भूल जाते हैं कि इस तरह से वे गिरावट को वैध मान रहे हैं। कुछ लोग तो अब भी यह मानते हैं कि पत्रकार का अपना पक्ष या विचार रूझान हो तो है या होना भी चाहिये पर

क्या वह उसके कथ्य में नहीं उतरेगा, इस बारे में उनकी अपनी राय हो जाती है। यह भी लोगों ने स्वीकार किया कि बीते दो तीन बरसों में पत्रकारों में विचार या पक्ष की पक्षधरता उभरकर सामने आ रही है। अब तक यह थी तो, पर एक तरह से छिपी-छिपी रही है।

०००